Purva Mimaansa
A Multi-discipinary Bi-annual Research Journal
(Double Blind Peer Reviewed)

Vol. 9 No. 1-2, March-Sep. 2018
ISSN : 0976-0237
UGC Approved Journal No. 40903

शासकीय सनातन धर्मः मानवाधिकार संरक्षण के प्ररिप्रेक्ष्य में

डा॰ विशाल भारद्वाज

संक्षेपिका

सनातन शब्द का अभिप्राय है 'शाश्वत' अथवा 'जो आज भी नवीन है' तथा धर्म का तात्पर्य नियमों एवं कर्त्तव्यों से है। शासक के परिप्रेक्ष्य में 'सनातन धर्म' से अभिप्राय शासक के उन शाश्वत कर्त्तव्यों एवं नीतियों से है जोकि एक सुदृढ एवं स्वच्छ शासन प्रणाली के लिए परम आवश्यक हैं। शासक को चाहिये कि वह अपने राज्य में प्रजा को सामाजिक एवं शारीरिक सुरक्षा का अधिकार, स्त्री सुरक्षा का अधिकार, आर्थिक संरक्षण का अधिकार, शिक्षा का अधिकार आदि प्रदान करने के साथ–साथ कर्मचारियों को उसकी योग्यता अनुरूप वेतन प्रदान न करके उनके मानवाधिकार के हो रहे शोषण को रोके तथ प्रजा–पालन के साथ–साथ आन्तरिक एवं बाह्य शत्रुओं से प्रजा का संरक्षण करने के लिए सदैव प्रयत्नशील रहे। अतः न्यायपूर्वक प्रजा का पालन एवं संरक्षण करना ही शासक का सनातन धर्म है तथा यदि शासक ईमानदारी से अपने इस धर्म का पालन करता है तो न तो प्रजा में अराजकता मिलेगी तथा न ही मानवाधिकारों का हनन होगा।

'सनातन धर्म' शब्द का प्रयोग भारतीय संस्कृति में प्राचीन काल से चला आ रहा है। सनातन शब्द का अभिप्राय है 'शाश्वत' अथवा 'जो आज भी नवीन है'[1] तथा धर्म का तात्पर्य नियमों एवं कर्त्तव्यों से है। धर्म शब्द की व्युत्पति पर ध्यान देने से पता चलता है कि 'धर्म' शब्द 'धृञ धारणे' धातु से बना है। जिसका अर्थ है धारण करना, बनाए रखना अथवा पुष्ट करना।[2] ऋग्वेद में भी 'निश्चित नियमार्थ' 'धर्म' पद प्रयुक्त है।[3] महाभारतकार का भी कथन है कि धर्म से ही प्रजा उत्पन्न हुई है। सबको धाारण करने के कारण ही इसे धर्म कहा जाता है यह अधोगति में जाने से बचाता है तथा जीवन की रक्षा करता है। अतः जिससे धारण तथा पोषण हो, वही धर्म है।[4] स्नातक धर्म[5] व चारों वर्णों[6] एवं आश्रमों व धर्म[7] व राजधर्म[8] व यतिधर्म[9] आदि उल्लेखों से 'धर्म' शब्द का अर्थ 'कर्त्तव्य' स्पष्ट रूप से द्योतित हो रहा है।

शासक व परिप्रेक्ष्य में 'सनातन धर्म' से अभिप्राय शासक के उन शाश्वत कर्त्तव्यों एवं नीतियों से है जोकि एक सुदृढ एवं स्वच्छ शासन प्रणाली के लिए परम आवश्यक हैं। प्रजा को मानवीय अधिकार प्रदान करने एवं इनके संरक्षण में शासक की महतवपूर्ण भूमिका होती है।

सामाजिक एवं शारीरिक सुरक्षा का अधिकार प्रत्येक मानव के लिए अपेक्षित है। शासक के अभाव में इसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती। शासक की अनुपस्थिति में जीवन के अभाव को परिलक्षित करते हुए नीतिशास्त्र का कथन है कि राजा अपनी प्रजा के लिए मेघ तुल्य

असिस्टैंट प्रोफेसर, संस्कृत विभाग, हिन्दू कॉलेज,अमृतसर।

Vol. 9 No. 1-2, March-Sep. 2018
ISSN : 0976-0237
UGC Approved Journal No. 40903

जीवनाश्रय है। मेघ के न बरसने पर तो कुछ समय तक जीवन धारण किया जा सकता है। किन्तु शासक के अभाव में जीवित नहीं रहा जा सकता।[10] अर्थात् हमारी सुरक्षा का अधिकार संकट में पड जाता है। महर्षि वाल्मीकि[11], महर्षि वेदव्यास[12] तथा आचार्य चाणक्य[13] मात्स्य न्याय की चर्चा करते हैं। इस न्याय के अनुसार जिस प्रकार बड़ी मछली छोटी मछली को खा जाती है। उसी प्रकार अराजकीय शासन प्रणाली, जहां सशक्त शासक का अभाव होता है, वहां पारिवारिक सम्बन्ध बिखर जाते हैं, बाग–बगीचे, धर्मशाला आदि पुण्यग्रहों का निर्माण नहीं होता, कृषि व पशुपालन पर आधारित आजीविका वाले लोग लूट–खसूट , भय से निश्चिन्त होकर सो नहीं पाते तथा निर्जन स्थलों से स्त्रियों व वाहनादि का गुजरना सुरक्षित नहीं होता। ऐसा राष्ट्र जल रहित नदी, घास व झाड़ियों से रहित वन तथा गवालों के बिना गऊओं के तुल्य होता है।[14] भाव मानवाधिकारों से सर्वदा रहित होता है। अतः मानवीय अधिकारों की रक्षा के लिये कुशल तथा सशक्त शासक नितान्त अपेक्षित है।

प्रजा का पालन करना ही शासक का सनातन धर्म माना गया है।[15] प्रजा–पालन के साथ–साथ शासक को आन्तरिक एवं बाह्य शत्रुओं से प्रजा संरक्षण के लिए प्रेरित करना मानवाधिकार संरक्षण की ओर ही सङ्केत करता है।[16] शासक को लुटेरों, चोरों, ऐन्द्रजालिक आदि धूर्तों दुस्साहसी डाकुओं एवं दुष्ट जनों आदि से प्रजा की रक्षा करने का आदेश प्रजा के मानवाधिकारों की रक्षा करने में महतवपूर्ण भूमिका निभाता है।[17]

स्त्री सुरक्षा के अधिकार को सङ्केतित करते हुए महाकवि कालिदास का कथन है कि पुरूवंशी शासकों द्वारा शासित पृथ्वी पर भोली–भाली तपस्विनी कन्याओं को कौन सता सकता है।[18] यहां शासक को स्त्री सुरक्षा के प्रति सचेत किया गया है जोकि उसका (स्त्री का) मानवाधिकार है।

मनुष्य को अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु धन पर आश्रित रहना पड़ता है। नीतिशास्त्र में पुरूषार्थ चतुष्टर्थी (धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष) के अन्तर्गत परिगणित 'अर्थ' की प्राप्ति के लिए सदैव प्रयत्नशील रहने की बात वर्णित है।[19] 'अर्थ' की प्रधानता को स्पष्ट करते हुए कहा गया है कि मनुष्य धन का दास होता है। न कि धन मनुष्य का दास। अतः धर्म, काम एवं मोक्ष का साधक होने के कारण इसकी प्राप्ति के लिए सदैव प्रयासरत रहना चाहिए।[20] मैं न तो कभी वृद्धावस्था को प्राप्त होगा तथा न ही कभी मेरी मृत्यु होगी'– ऐसा मानकर मनुष्य को धनसंचय में प्रवृत होना चाहिए।[21] शासक का धर्म है कि वह अपनी प्रजा को आर्थिक संरक्षण प्रदान करे, जोकि प्रजा का अधिकार है, क्योंकि राजा अपनी प्रजा की रक्षा के लिए ही उससे कर ग्रहण करता है व प्रजा कर प्रदान करके राजा को संवर्द्धित करती है।[22] अतः शासक का धर्म है कि वह कृषि एवं किसानों , पशुओं, राजप्रिय, कार्मिकों (कर ग्रहण करने वालों), चोरों, व्याघ्रों, लुटेरों व हिंसक जन्तुओं से व्याप्त व्यापार मागों का भी प्रजा के आर्थिक अधिकारों के संरक्षण हेतु परिशोधन करे।[23]

किसी कर्मचारी को उसकी योग्यता के अनुरूप वेतन प्रदान न करके उसके मानवाधिकार का शोषण किया जा रहा है। नीतिशास्त्र का कथन है कि यदि शासक अपने कर्मचारी से कठोर भाषा में बात करता है। उसे अपमानित करता हैं। दण्ड देता है एवं पूर्ण वेतन नहीं देता तो उसे अपने ही विरूद्ध शत्रुता सिखलाता है।[24] अतः शासक को अपने कर्मचारियों के

Vol. 9 No. 1-2, March-Sep. 2018
ISSN : 0976-0237
UGC Approved Journal No. 40903

अधिकारों को ध्यान में रखते हुए अपने कर्मचारियों का वेतन उनकी योग्यता के आधार पर सुनिश्चित करना चाहिए तथा वेतन निर्धारित करते समय यह भी ध्यान रखना चाहिए कि कर्मचारी के आश्रित जनों का भली.भान्ति पालन.पोषण हो सके।[25]

शिक्षा प्राप्ति की गणना भी मानवाधिकारों के अन्तर्गत की जाती है। यद्यपि विद्या एवं कलाओं का कोई अन्त नहीं है। तथापि बत्तीस मुख्य विद्यायें तथा चौसठ कलाओं का उल्लेख महर्षि शुक्राचार्य ने किया है।[26] ये बत्तीस विद्यायें हैं चार वेद (ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद), चार उपवेद (आयुर्वेद, धनुर्वेद, गान्धर्ववेद, तन्त्र), छः वेदांग (शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरूक्त, ज्योतिष तथा छन्द), मीमांसा, न्याय, सांख्य, वेदान्त, योग, इतिहास, पुराण, स्मृति, नास्तिकमत, अर्थशास्त्र, कामशास्त्र, शिल्पशास्त्र, अलङ्कारशास्त्र, काव्य, राष्ट्रभाषा, सूक्तिशास्त्र, यवनों का मत तथा वैदेशिक धर्मग्रन्थ।[27] यह विद्या रूपी धन सभी धनों से श्रेष्ठतर धन है, क्योंकि अन्य सभी धन विद्यामूलक ही हैं। बांटने से यह सदा वृद्धि को प्राप्त होता है तथा किसी के द्वारा छीना नहीं जा सकता।[28] प्रजा के शिक्षा प्राप्ति के अधिकार के संरक्षण हेतु शासक का धर्म है कि वह कला एवं विद्या की उन्नति के लिए सदा प्रयासरत रहे तथा छात्रवृत्ति देकर लोगों को हर विद्या तथा कला की शिक्षा दिलवाये। इतना ही नही, अध्ययन की समाप्ति के उपरान्त शासक उनकी योग्यता के अनुरूप कार्यो में उनको नियुक्त करे तथा विद्या एवं कला के क्षेत्र में जो अत्यधिक निपुण हों, उन्हें प्रतिवर्ष पुरस्कारादि प्रदान कर सम्मानित करे।[29]

मानवाधिकार संरक्षण में न्याय प्रणाली की महत्तवपूर्ण भूमिका है। न्यायपूर्वक प्रजा के अभीष्ट का साधन ही प्रजापालन कहलाता है[30], जोकि शासक का सनातन धर्म हैं धर्मसंहिता में वर्णित आचरण के विपरीत राह पकड़ कर यदि कोई किसी को सताता है अर्थात उसके मानवाधिकारों का हनन करता है तो उसके विरूद्ध न्यायालय में दावा पेश करने का अधिकार 'व्यवहारपद' अर्थात् मुकद्दमा दायर करना कहलाता है।[31] अतः शासक का धर्म है कि वह अपनी प्रजा के मानवाधिकारों की रक्षा हेतु ऐसे अपराधी लोगों को यथोचित दण्ड प्रदान करे। विवस्वान् (सूर्य) के पुत्र रूप में प्रसिद्ध यम देवता पुण्यात्मा एवं पापी में किसी भी प्रकार का भेद न करते हुए उनको उनके कर्मो के अनुसार विनष्ट करते हैं।[32] शासक को भी अपनी प्रजा के मानवाधिकारों के संरक्षण हेतु यमराज की भान्ति कुकर्मी एवं गलत मार्ग पर प्रवृत लोगों को दण्डित करने के लिए सदैव प्रवृत रहना चाहिए।[33]

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि मानवाधिकार संरक्षण में शासकीय योगदान अत्यन्त अपेक्षित है। न्यायपूर्वक प्रजा का पालन एवं संरक्षण करना ही शासक का सनातन धर्म है तथा यदि शासक ईमानदारी से अपने इस धर्म का पालन करता है तो न तो प्रजा में अराजकता मिलेगी तथा न ही मानवाधिकारों का हनन होगा।

सन्दर्भ

1. सनातनमेनमाहुरूताद्य स्यात् पुनर्णवः।...
   अथर्ववेद, 10–8–23.
2. 'धृञ् धारणे' धातु से 'यर्तिस्तदृश–मन' इस उणादि सूत्र द्वारा 'मन' प्रत्यय होने पर 'धर्म' पद बना है।

Vol. 9 No. 1-2, March-Sep. 2018
ISSN : 0976-0237
UGC Approved Journal No. 40903

शब्दकल्पद्रुम, पृ॰ 78.

3. (i) धर्मणा मित्रावरूणा विपश्चिता व्रता रक्षेथे असुरस्य मायया।...
ऋग्वेद, 5—63—7.
(ii) ....द्यावापृथिवी वरूणस्य धर्मणा विष्कभिते अजरे भूरिरेतसा।।
वही, 6—70—1.

4. धारणात् धर्मित्याह् धर्मो धारयते प्रजाः।
यत् स्यात् धारणं संयुक्त स धर्म इति निश्चयः।।
महाभारत, कर्णपर्व, 169—58.

5. श्रुत्वैतानृषयो धर्मान्स्नातकस्य यथोदितान्।..
मनुस्मृति, 4—1.

6. (i) वर्णेषु धर्मा विविधा मयोक्तृ.....।।
लघुहारीतस्मृति, 2—15.
(ii) श्रुतिस्मृत्युदितं धर्म वर्णानामनुपूर्वशः।
प्राब्रवीदृषिभिः पृष्टो मुनीनामग्रणीर्यमः।।
लघुयमस्मृति, 1.
(iii) चतुर्णामपि वर्णाणां कर्तव्यं धर्मकोविदैः।
ब्रूहि धर्मस्वरूपज्ञ सूक्ष्मं स्थूलं च विस्तरात्।।
पराशरस्मृति, 1—18.

7. (i) वर्णाश्चत्वारो राजेन्द्र! चत्वारश्चापि चाश्रमाः।
स्वधर्मं ये तु तिष्ठन्ति ते यान्ति परमां गतिम्।।
लघुहारीतस्मृति, 7—18.
(ii) गृहाश्रमेषु धर्मेषु वर्णानामनुपूर्वशः।.....
आङ्गिरसस्मृति, 1.
(iii) ....आश्रमाणामयं प्रोक्तो मया धर्मः सनातनः।।
विष्णुप्रोक्तधर्माशास्त्र, 113.

8. राजधर्मप्रकरणम्।
याज्ञवल्क्यस्मृति, 1/13/309—368.

9. यतिधर्मप्रकरण्।
याज्ञवल्क्यस्मृति, 3/4/56—205.

10. पर्जन्य इव भूतानामाधारः पृथिवीपतिः।
विकलेऽपि हि पर्जन्ये जीव्यते न तु भूपतौ।।
हितोपदेश, 1—205.

11. नाराजके जनपदे स्वकं भवति कस्यचित्।
मत्स्या इव नरा नित्यं भक्षयन्ति परस्परम्।।

Vol. 9 No. 1-2, March-Sep. 2018
ISSN : 0976-0237
UGC Approved Journal No. 40903

वाल्मीकीयरामायण, 2 / 67 / 31.

12. राजा चेन्न भवेल्लोके पृथिव्यां दण्डधारकः ।
जले मत्स्यानिवाभक्ष्यन् दुर्बलं बलवत्तराः ।।
महाभारत, शान्तिपर्व, 67–16.

13. ...मात्स्यन्यायाभिभूताः प्रजा मनुं वैवस्वतं राजानं चक्रिरे ।।
अर्थशास्त्र, 1 / 8 / 12, पृ॰ सं॰ – 37.

14. (i) ...अराजकं हि नो राष्ट्रं विनाशं समवाप्नुयात् ।।
वाल्मीकि रामायण, 2 / 67 / 8.

(ii) नाराजके जनपदे धनवन्तः सुरक्षिताः ।
शेरते विवृतद्वाराः कृषिगोरक्षजीविनः ।।
वही, 2 / 67 / 18.

(iii) यथा ह्यनुदका नद्यो यथा वाप्यतृणं वनम् ।
अगोपाला यथा गावस्तथा राष्ट्रमराजकम् ।।
वही, 2 / 67 / 29.

15. (i) क्षत्रियस्य परो धर्मः प्रजानामेव पालनम् ।...
मनुस्मृति, 7 / 144.

(ii) नृपस्य परमो धर्मः प्रजानाम् परिपालनम ।...
शुक्रनीति, 1 / 14.

(iii) ...इष्टसम्पादनं न्याय्यं प्रजानां पालनं हि तत् ।।
वही, 4 / 5 / 2.

(iv) आनृशंस्यं परो धर्मः सर्वप्राणभृतां यतः ।
तस्माद्राजानृशंस्येन पालयेत् कृपणं जनम् ।।
वही, 1 / 159.

(v) ...क्षत्रियस्य परो धर्मः प्रजानां परिपालनम् ।।
विष्णुप्रोक्तधर्मशास्त्र, 102.

(vi) लोकरञ्जनमेवात्र राज्ञां धर्मः सनातनः ।
महाभारत, शान्तिपर्व, 57 / 11.

(vii) ...संग्रामेष्वनिवर्तित्वं प्रजानां परिपालनम् ।।
मत्स्य पुराण, 2 / 4 / 60.

16. (i) प्रियंवदा–आपन्नस्य विषयनिवासिनो जनस्यार्तिहरेण राज्ञा भवितव्यमित्येष युष्माकं धर्मः । राजा–नास्मात्परम् ।
अभिज्ञानशाकुन्तलम्, तृतीयाङ्क, पृ॰ सं॰ – 192.

(ii) ...सर्वस्यास्य यथान्यायं कर्तव्यं परिरक्षणम् ।।
मनुस्मृति, 7 / 2.

Vol. 9 No. 1-2, March-Sep. 2018
ISSN : 0976-0237
UGC Approved Journal No. 40903

(iii) ...तथा रक्षेन्नृपो राष्ट्रं हन्याच्च परिपन्थिनः।।
वही, 7/110.

(iv) ...युक्तश्चैवाप्रमतश्च परिरक्षेदिमाः प्रजाः।।
वही, 7/142.

(iv) क्षत्रियो हि प्रजा रक्षन् शस्त्रपाणिः प्रचण्डवत्।...
पराशरस्मृति, 1/58.

(vi) राज्ञोऽधिकं रक्षणं सर्वभूतानां न्यायदण्डत्वं बिभृयाद्...।।
गौतमस्मृति, 10/2.

(vii) वर्णानाश्रमांश्च न्यायतोऽभिरक्षेच्चलश्चैनान् स्वधर्मे...।।
वही, 11/2.

17 (i) चाटतस्करदुर्वृतमहासाहसिकादिभिः।
पीड्यमानाः प्रजा रक्षेत्कायस्थैश्च विशेषतः।।
याज्ञवल्क्यस्मृति, 1/336.

(ii) चाटुतस्करदुर्वृत्तैस्था साहसिकादिभिः।
पीड्यमानाः प्रजा रक्ष्याः कूटच्छद्मादिभिस्तथा।।
पञ्चतन्त्र, 1/374.

(iii) कण्टकान् शोधयेत्।।
बुद्धस्मृति, 35.

(iv) तस्करेभ्यो नियुक्तेभ्यः शत्रुभ्यो नृपवल्लभात्।
नृपतिर्निजलोभाच्च प्रजा रक्षेत्पितेव हि।।
हितोपदेश, 2/109.

18. कः पौरवे वसुमतीं शासति शासितरि दुर्विनीतानाम्।
अयमाचरत्यविनयं मुग्धासु तपस्विकन्यासु।।
अभिज्ञानशाकुन्तलम्, 1/25.

19. धर्मार्थकाममोक्षाणां यस्यैकोऽपि न विद्यते।
जन्म जन्मनि मर्त्येषु मरणं तस्य केवलम्।।
चाणक्यनीति, 3/20.

20. अर्थस्य पुरूषो दासो दासस्त्वर्थो न कस्यचित्।
अतोऽर्थाय यतेतैव सर्वदा यत्नमास्थितः।
अर्थाद्धर्मश्च कामश्च मोक्षश्चापि भवेन्नृणाम्।।
शुद्रनीति, 57/38.

21. (i) अमरवदर्थजातमर्जयेत्।।
(ii) अर्थवान् सर्वलोकस्य बहुमतः।।
चाणक्यसूत्र, 254/255.

Vol. 9 No. 1-2, March-Sep. 2018
ISSN : 0976-0237
UGC Approved Journal No. 40903

(iii) अजरामरवत् प्राज्ञो विद्यामर्थं च चिन्तयेत्... ।।
हितोपदेश, प्रस्ताविका, 3.

22. (i) प्रजां संरक्षति नृपः सा वर्धयति पार्थिवम् ।...
वही, 3 / 3.

(ii) अरक्ष्यमाणाः कुर्वन्ति यत्किञ्चित्किल्विषं प्रजाः ।
तस्मातु नृपतेरर्धं यस्माद् गृह्णात्यसौ करान् ।।
याज्ञवल्क्यस्मृति, 1 / 337.

(iii) वृक्षान् सम्पुष्य यत्नेन गलं पुष्पं विचिन्वति ।
मालाकार हवात्यन्तं भागहारस्तथाविधः ।।
शुक्रनीति, 2 / 172.

(iv) भानुः सकृद्युक्ततुरङ्ग एव रात्रिन्दिवं गन्धवहः प्रयाति ।
शेषः सदैवाहितभूमिभारः षष्ठांशवत्तेरपि धर्म एषः ।।
अभिज्ञानशाकुन्तलम् 5 / 4.

23. दण्डविष्टिकराबाधैः रक्षेदुपहतां कृषिम् ।
स्तेनव्यालविषग्राहैर्व्याधिभिश्च पशुव्रजान् ।।
वल्लभैः कार्मिकैः स्तेनैरन्तपालैश्च पीडितम् ।
शाधयेत्पशुसंघैश्च क्षीयमाणं वणिक्पथम् ।।
अर्थशास्त्र, 2 / 17 / 1, पृ॰ सं॰ – 81.

24. (i) ये भृत्या हीनभृतिकाः शत्रवस्ते स्वयं कृताः!
शुक्रनीति, 2 / 400.

(ii) वाक्पारूष्यान्नयूनभृत्या स्वामी प्रबलदण्डतः ।
भृत्यं प्रशिक्षयेन्नित्यं शत्रुत्वं त्वपमानतः ।।
वही, 2 / 415.

25. अवश्यपोष्यवर्गस्य भरणं भृतकाद् भवेत् ।
तथा भृतिस्तु संयोज्या तद्योग्यभृतकाय वै ।।
वही, 2 / 399.

26. विद्या ह्यनन्ताश्च कलाः संख्यातुं नैव शक्यते ।
विद्या मुख्याश्च द्वात्रिंशच्चतुःषष्टिः कलाः स्मृताः ।।
शुक्रनीति, 4 / 3 / 24.

27. ऋग्यजुः साम चाथर्वा वेदा आयुर्धनुः क्रमात ।
गान्धर्वश्चैव तन्त्राणि उपवेदाः प्रकीर्तिताः ।।
शिक्षा व्याकरणं कल्पो निरूक्तं ज्योतिषं तथा ।
छन्दः षडङ्गानीमानि वेदानां कीर्त्तितानि हि ।।
मीमांसातर्कसांख्यानि वेदान्तो योग एव च ।

Vol. 9 No. 1-2, March-Sep. 2018
ISSN : 0976-0237
UGC Approved Journal No. 40903

इतिहासाः पुराणानि स्मृत्यो नास्तिकं मतम् ।।
अर्थशास्त्रं कामशास्त्रं तथा शिल्पमलङ्कृतिः ।
काव्यानि देशभाषावसरोक्तिर्यावनं मतम् ।
देशादिधर्मा द्वात्रिंशदेता विद्याभिसंज्ञिताः ।।
शुक्रनीति, 4 / 3 / 27–30.

28. विद्याधनं श्रेष्ठतरं तन्मूलमितरद्धनम् ।
दानेन वर्द्धते नित्यं न भाराय न नीयते ।।
वही, 3 / 178.

29. (i) विद्याकलानां वृद्धि स्यात्तथा कुर्य्यान्नृपः सदा ।...
वही, 1 / 369.

(ii) ...सर्वविद्याकलाभ्यासे शिक्षयेद् भृतिपोषितान् ।।
वही, 1 / 367.

(iii) समाप्तविद्यं सन्दृष्ट्वा तत्कार्य्ये तं नियोजयेत् ।
विद्याकलातमान् दृष्ट्वा वत्सरे पूजयेच्च तान् ।।
वही, 1 / 368.

30. ...इष्टसम्पादन् न्याय्यं प्रजानां पालनं हि तत् ।।
वही, 4 / 5 / 2.

31. स्मृत्याचारव्यपेतेन मार्गेणाऽऽधर्षितः परैः ।
आवेदयति चेद्राज्ञे व्यवहारपदं हि तत् ।।
याज्ञवल्क्यस्मृति, 2 / 5, शुक्रनीति, 4 / 5 / 68.

32. परेयिवांसं प्रवतो महीरनु बहुभ्यः पन्थामनुपस्पशानम् ।
वैवस्वतं संगमनं जनानां यमं राजानं हविषा दुवस्य ।।
ऋग्वेद, 10 / 14 / 1.

33. (i) दुष्कर्मदण्डको राजा यमः स्याद् दण्डकृद् यमः ।।
शुक्रनीति, 1 / 75.

(ii) यथा यमः प्रियद्वेष्यौ प्राप्ते काले नियच्छति ।
तथा राज्ञा नियन्तव्याः प्रजास्तद्धि यमव्रतम् ।।
मनुस्मृति, 9 / 307.

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. अभिज्ञानशाकुन्तलम्: कालिदास, डा॰ निरूपण विद्यालंकार (सम्पादक), साहित्य भण्डार, मेरठ, 2015.
2. अथर्ववेद : आचार्या राम शर्मा (सम्पादक), ब्रह्मावर्चस्, शान्ति कुञ्ज, हरिद्वार, संवत् 2056.
3. अर्थशास्त्र : चाणक्य, वाचस्पति गैरोला (व्याख्याकारा), चौखम्बा विद्या भवन, वाराणसी, 2013.
4. अष्टादशस्मृति : मिहिर चन्द्र (व्याख्याकार), नाग पब्लिशर्स, दिल्ली, 2006.

5. आंगिरसस्मृति : अष्टादशस्मृति का भाग, मिहिर चन्द्र (व्याख्याकार), नाग पब्लिशर्स, दिल्ली, 2006.
6. ऋग्वेद : आचार्या राम शर्मा (सम्पादक), ब्रह्मावर्चस्, शान्ति कुञ्ज, हरिद्वार, संवत् 2056.
7. गौतमस्मृति : अष्टादशस्मृति का भाग, मिहिर चन्द्र (व्याख्याकार), नाग पब्लिशर्स, दिल्ली, 2006.
8 चाणक्यनीति : चाणक्य, आचार्य मानिक (व्याख्याकार), साधना पब्लि,शन्स, दिल्ली, 2014.
9 चाणक्यसूत्र : चाणक्य, वाचस्पति गैरोला (व्याख्याकार), चौखम्बा विद्या भवन, वाराणसी, 2013.
10 पंचतन्त्र : विष्णुशर्मा, संजय सचदेवा (सम्पादक), संस्कृत ग्रन्थागार, दिल्ली, 2009.
11 पराशरस्मृति : अष्टादशस्मृति का भाग, मिहिर चन्द्र (व्याख्याकार), नाग पब्लिशर्स, दिल्ली, 2006.
12 बुद्धस्मृति : अष्टादशस्मृति का भाग, मिहिर चन्द (व्याख्याकार), नाग पब्लिशर्स, दिल्ली, 2006.
13 मत्स्यपुराण : पण्डित कालीचरण (टीकाकार), चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, 2001.
14 मनुस्मृति : महर्षि मनु, पं हरगोविन्दशास्त्री (हिन्दी व्याख्याकार), चौखम्बा संस्कृत संस्थान, वाराणसी, संवत् 2039.
15 महाभारत : वेदव्यास, गीता प्रैस, गोरखपुर, 1978.
16 याज्ञवल्क्यस्मृति : महर्षि याज्ञवल्क्य, डॉ॰ गंगासागर राय (हिन्दी व्याख्याकार), चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, दिल्ली, 1990.
17 लघुयमस्मृति : अष्टादशस्मृति का भाग, मिहिर चन्द्र (व्याख्याकार), नाग पब्लिशर्स, दिल्ली, 2006.
18 लघुहारीतस्मृति : अष्टादशस्मृति का भाग, मिहिर चन्द्र (व्याख्याकार), नाग पब्लिशर्स, दिल्ली, 2006.
19 वाल्मीकियरामायण : महर्षि वाल्मीकि, गीता प्रैस, गौरखपुर, 2008.
20 विष्णुप्रोक्तधर्मशास्त्र : अष्टादशस्मृति का भाग, मिहिर चन्द्र (व्याख्याकार), नाग पब्लिशर्स, दिल्ली, 2006.
21. शुक्रनीति : महर्षि शुक्राचार्य, डॉ॰ जगदीशचन्द्र मिश्र (व्याख्याकार), चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, 1998.
22 हितोपदेश : नारायण पण्डित, पं रामेश्वर भट्ट (भाषान्तरकार), चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, दिल्ली, 2013.